१२

गोरक्षनाथ के समसामयिक सिद्ध

नाथपंथ के चौरासी सिद्धों में से कई वज्रयानी परंपरा के सिद्ध हैं। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि इन उभय सामान्य सिद्धों में से कुछ तो गोरक्षनाथ के पूर्ववर्ती होंगे और कुछ समसामयिक। गोरक्षनाथ के अप्रतिद्वंद्वी व्यक्तित्व और अप्रतिहत प्रभाव को देखते हुए यह अनुमान करना अनुचित नहीं है कि उनके बाद का कोई भी ऐसा व्यक्ति नाथ-परंपरा का सिद्ध नहीं माना गया होगा जो सम्पूर्ण रूप से उनका अनुयायी न हो। जिन सम्प्रदाय-प्रवर्तक सिद्धों की चर्चा हम पहले कर चुके हैं उनके अतिरिक्त निम्नलिखित सिद्धों के विषय में नाना सूत्रों से हम कुछ जानकारी संग्रह कर सके हैं (अधिकांश में यह बातें दन्तकथाओं पर ही आधारित हैं पर कुछ बातें समसामयिक या परवर्ती ग्रंथों से भी मिल जाती हैं।)—

१. चौरंगीनाथ	१३. ढेण्टस
२. चामरीनाथ	१४. चुणकर
३. तंतिपा	१५. भादे
४. दारिपा	१६. कामरी
५. विरूपा	१७. धर्मपापतंग
६. कामरी	१८. भद्रपा
७. कनखल	१९. सबर
८. मेखल	२०. सान्ति
९. धोबी	२१. कुमारी
१० नागार्जुन	२२. सियारी
११. अचिंति	२३. कमलकंगारि
१२. चम्पक	२४. चर्पटीनाथ

नीचे हम इनका संक्षिप्त परिचय दे रहे हैं—

१. चौरंगीनाथ—तिब्बती परंपरा में गोरक्षनाथ के गुरुभाई माने गए हैं।[1] इनकी लिखी कही जाने वाली एक पुस्तक—प्राण संकली—पिंडी के जैन ग्रंथ भाण्डार में सुरक्षित है। इसमें इन्होंने अपने को राजा सालबाहन का बेटा, मच्छंद्रनाथ का शिष्य और गोरक्षनाथ का गुरुभाई बताया है। इस छोटी-सी पुस्तक से यह भी पता चलता है कि इनकी विमाता ने इनके हाथ पैर कटवा दिए थे। ये ही पंजाब की लोक कथाओं के पूरनभगत हैं जिनके विषय में हम आगे कुछ विस्तार पूर्वक लिखेंगे। चौरंगीनाथ की

१. गं गा : पृ० २६०

प्राण संकली की भाषा शुरू में पूर्वी है पर बाद में राजस्थानी-जैसी हो जाती है। शुरू का अंश इस प्रकार है—

> सत्य बदंत चौरंगीनाथ आदि अन्तरि सुनौ बितांत सालबाहन घरे हमारा जनम उतपति सतिमा झुठ बोलीला ॥ १ ॥ हूं अम्हारा भइला सासत पाप कलपना नहीं हमारे मने हाथ पाव कटाय रलायला निरंजन बने सोष सन्ताप मने परमेव सनमुष देषीला श्री मछंद्रनाथ गुरुदेव नमसकार करीला नमाइला माथा ॥ २ ॥ असीरवाद पाइला अम्हे मने भइला हरषित होठ कंठ तालुका रे सुकाईला धर्मना रूप मच्छंद्रनाथ स्वामी ॥ ३ ॥ मन जानै पुन्य पाप मुष बचन न आवै मुषै बोलव्या कैसा हाथ रे दीला फल मुषे पीलीला ऐसा गुसाईं बोलीला ॥ ४ ॥ जीवन उपदेस भाषिला फल अम्हे बिसाला दोष षुध्या त्रिषा बिसारला ॥ ५ ॥ नहीं माने लोक घर धरम सुमिरला अम्हे भइला सचेत के तम्ह कहारे बोले पुछीला ॥ ६ ॥

स्पष्ट ही यह भाषा पूर्वी है यदि प्राण संकली सचमुच चौरंगीनाथ की रचना है तो मानना पड़ेगा कि चौरंगीनाथ पूर्वी प्रदेश के रहने वाले थे। मैं इस पुस्तिका का संपादन कर रहा हूँ। ऐसा जान पड़ता है कि इस में पुराने अंशों के साथ नये अंश भी जोड़ दिए गए हैं। जितनी भी परंपराएं उपलब्ध हैं वे सभी पूरनभगत को स्यालकोट (पंजाब) से ही संबद्ध बताती हैं। तनजुर में चौरंगिपा की एक पुस्तक है जिसका नाम है तत्त्वभावनोपदेश। ठीक इसी नाम की एक पुस्तक गोरक्षपाद की भी बताई जाती है इतना यहाँ और उल्लेख योग्य है कि प्राण संकली नामक एक छोटी सी रचना भी गोरखनाथ की मानी जाती है। ऐसा जान पड़ता है कि चौरंगीनाथ नामक किसी पूर्व देशीय सिद्ध की कथा से पूरनभगत की कथा का साम्य देखकर दोनों को एक मान लिया गया है।

२. चामरीनाथ—संभवतः तिब्बती परंपरा के चौंसठवें सिद्ध चँवरिपा से अभिन्न हैं जिन्हें मगधदेश का रहनेवाला घी-विक्रेता बनिया जाति में उत्पन्न और गोरखनाथ का परवर्ती बताया गया है।

३. तंतिपा—तेरहवें वज्रयानी सिद्ध तंतिपा हैं। इन्हें तिब्बती परम्परा में मगध देश का ब्राह्मण और जालंधरपाद का शिष्य कहा जाता है। राहुल जी ने गंगा के पुरातत्त्वांक में एक स्थान पर इन्हें मगधदेशवासी ब्राह्मण (पृ० २२१) लिखा है और दूसरी जगह अवन्ती देश का तांती (पृ० २५६)। नाम देखने से दूसरी ही बात ज्यादा विश्वसनीय जान पड़ती है। कभी कभी इन्हें कण्हपाद से अभिन्न भी माना गया है जो ठीक नहीं जान पड़ता।

४. दारिपा—संभवतः वज्रयानी सिद्ध (नं० ७७) दारिकपा से अभिन्न हैं। इन्हें उड़ीसा का राजा बताया गया है। जब परम सिद्ध लुईपा (लूहिपा) उधर गए तो ये और इनके ब्राह्मण मंत्री उनके शिष्य हो गए। गुरु ने इन्हें वेश्या दारिका (वेश्या की

कन्या) की सेवा का आदेश दिया था। इस क्रम में उन्हें सफलता मिली। दारिका (लड़की) की सेवा करके सिद्धि पाने के कारण इन्हें 'दारिकपा' कहा जाने लगा। इनके निम्नलिखित पद से इनके राजा होने का तथा लुईपा का शिष्य होने का अनुमान किया जा सकता है:

राआ राआ राआ रे
अवर राअ मोहेर बाधा।
लुइ पाअ पए दारिक
द्वादश भुअनें लाधा॥

अर्थात्, 'राजा तो मैं अब हुआ हूँ और राज्य तो मोह के बंधन हैं। लुई पाद के चरणों का आश्रय करने से दारिक ने चौदहों भुवन प्राप्त कर लिया है।' महामहोपाध्याय पं० हरप्रसाद शास्त्री ने इन्हें बंगला का कवि माना है[1] और महापंडित श्री राहुल सांकृत्यायन ने उड़िया का[2]। इनके लोकभाषा में लिखित कई पद प्राप्त हुए हैं। भाषा उनकी 'निस्सन्देह पूर्वी प्रदेशों की है लेकिन वह उस अवस्था में है जिसे आज की सभी पूर्वी भाषाओं का पूर्वरूप कहा जा सकता है। सहजयोगिनी चिन्ता इन्हीं की शिष्या थीं और घंटापा शिष्य थे। तन्जुर में इनकी लिखी ग्यारह पोथियाँ संगृहीत हैं।

५. विरूपा—वज्रयानी सिद्ध तीसरे से अभिन्न। गोरखनाथ और कानिपा के समकालीन थे। सिद्ध नागबोधि के शिष्य थे। हरप्रसाद शास्त्री ने लिखा है कि वज्रयान और कालचक्रयान दोनों में इनकी पुस्तकें मान्य हैं। पुस्तकों में छिन्नमस्ता साधन, रक्तयमारि साधन प्रसिद्ध हैं। इनकी चार पुस्तकें गान की हैं—विरूप गीतिका, 'विरूपपद चतुरशीति, कर्मचण्डालिका, दोहाकोष गीति और विरूप वज्र गीतिका।[3] इनके अतिरिक्त अमृत सिद्धि, मार्गफलान्विताववादक और सुनिष्प्रपंच तत्वोपदेश भी इनके लिखे हैं।[4] इनका सिर्फ एक पद मूल रूप में उपलब्ध हुआ है जो बौ० गा० दो० में और गंगा के पुरातत्वांक में भी, संगृहीत है।

६. कमारी—यदि वज्रयानी सिद्ध पैंतालीस से अभिन्न हों तो जाति के लुहार थे।

७. कनखल—वज्रयानी सिद्धयोगिनी कनखला (नं० ६७) से अभिन्न जान पड़ती हैं। ये कृष्णाचार्यपाद (कानिपा) की शिष्या थीं। छपे वर्णरत्नाकर में इनका नाम केवल खल (खल) है जो संभवतः गलती से छपा है। इसका पूर्ववर्ती भाग (कन) कान्ह के नाम के साथ जुड़ गया है।

८. मेखल—सिद्धयोगिनी मेखलापा (नं० ६६) से अभिन्न जान पड़ती हैं। ये भी कानिपा की शिष्या थीं। कृष्णाचार्यपाद (कानिपा) के दोहाकोष पर मेखला नाम की संस्कृत टीका संभवतः इन्हीं की लिखी हुई है। तिब्बत में ये छिन्नमस्ता देवी के रूप में पूजी जाती हैं।

---

१. बौ. गा. दो० : पृ० ३०
२. गंगा : पृ० २५१
३. बौ० गा० दो०: पृ० २८
४. गंगा : पृ० २५०

९. धोबी—वज्रयानी सिद्ध भट्टाईम से अभिन्न जान पड़ते हैं। सालिपुत्र (?) देश में धोबी कुल में उत्पन्न हुए थे।

१०. नागार्जुन—महायान मत के प्रसिद्ध नागार्जुन से ये भिन्न थे। अलबेरूनी ने लिखा है कि एक नागार्जुन उनसे लगभग सौ वर्ष पहले वर्तमान थे। साधनमाला में ये कई साधनाओं के प्रवर्तक माने गए हैं। इन साधनाओं से कई बातों का खुलासा होता है। नागार्जुन, शबरपाद (सबर) और कृष्णाचार्य का काल भी मिल जाता है।

साधनमाला में कृष्णाचार्य की कुरुकुल्ला साधना का उल्लेख है। इस कुरुकुल्ला को ध्यानी बुद्ध की अभिव्यक्ति से उद्भूत बताया गया है। डा० विनयतोष भट्टाचार्य का अनुमान है कि कुरुकुल्ला की उपासना के प्रथम प्रवर्तक शबरपाद नामक सिद्ध हैं जिनका समय सप्तम शताब्दी सन ईसवी का मध्यभाग है। ये नागार्जुन के शिष्य थे। नागार्जुन ने भी एक विशेष देवी 'एकजटा' की उपासना का प्रवर्तन किया था। साधनमाला में बताया गया है कि इस एकजटा देवी की साधना को नागार्जुनपाद ने भोट देश (तिब्बत) से उद्धार किया था। इसी देवी का एक नाम 'महाचीन तारा' भी है। तारा की उपासना ब्राह्मण तंत्रों में भी विहित है। साधनमाला में कुरुकुल्ला के भी अनेक रूपों का वर्णन है जिन में एक रूप है तारोद्भवा कुरुकुल्ला। इस प्रकार कुरुकुल्ला, एकजटा और तारा की उपासनाओं में कोई संबंध स्पष्ट ही मालूम होता है। डा० विनयतोष भट्टाचार्य ने परानंद सूत्र की भूमिका (पृ० १०-११) में दिखाया है कि महाचीनतारा ने ही आगे चल कर हिंदुओं की चतुर्भुजा तारा (जो दस महाविद्याओं में है) का रूप ग्रहण किया है। हिंदू तंत्रों की उमा, महोमा, भद्रकाली, सरस्वती, कामेश्वरी आदि देवियों को तारा की ही अभिव्यक्ति बताया गया है दस महाविद्याओं की छिन्नमस्ता को बौद्ध वज्रयोगिनी का समशील बताया गया है और कहा गया है कि इसकी उपासना के भी मूल प्रवर्तक शबरपाद ही थे। ऐसा जान पड़ता है कि कृष्णपाद या कृष्णाचार्य इस देवी के उपासक थे। कृष्णाचार्य की शिष्या मेखलापा तिब्बत में छिन्नमस्ता के रूप में पूजी जाती हैं। इससे दो बातों का अनुमान होता है। प्रथम तो कृष्णाचार्य का समय निश्चित रूप से शबरपाद के बाद सिद्ध होता है और दूसरा यह कि परवर्ती शाक्त मत के विकास में इनका बहुत बड़ा हाथ है।

प्रबंधचिन्तामणि से पता चलता है कि नागार्जुन पादलिप्त सूरि के शिष्य थे और उनसे ही इन्होंने आकाश-गमन की विद्या सीखी थी। समुद्र में पुराकाल में पार्श्वनाथ की एक रत्नमूर्ति द्वारका के पास डूब गई थी जिसे किसी सौदागर ने उद्धार किया था। गुरु से यह जान कर कि पार्श्वनाथ के पादमूल में बैठ कर यदि कोई सर्वलक्षण समन्विता स्त्री पारे को घोंटे तो कोटिवेधी रस सिद्ध होगा। नागार्जुन ने अपने शिष्य राजा सातवाहन की रानी चंद्रलेखा से पार्श्वनाथ की रत्नमूर्ति के सामने पारद-मर्दन करवाया था। रानी के पुत्रों ने रस के लोभ से नागार्जुन को मार डाला था। इस कथा में कई ऐतिहासिक असंगतियाँ हैं पर इससे कुछ बातें स्पष्ट हो जाती हैं। (१) प्रथम यह कि नागार्जुन रसेश्वर सिद्ध थे, (२) दूसरी यह कि गोरखपंथियों की पारसनाथी शाखा के प्रवर्तक भी शायद वही हैं और (३) तीसरी यह कि वे पश्चिम भारत के

निवासी थे। नागार्जुन को परवर्ती योगियों ने "नागा अरजंद" कहा है। इनके संबंध में अनेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं। नाथपंथ के बारह आचार्यों में इनकी गणना है।

एक परवर्ती सिद्ध नागनाथ के साथ भी कभी कभी इनको मिलाकर दोनों को अभिन्न मान लिया जाता है।

११. अचिति—वज्रयानी सिद्ध अचिन्तिपा (नं० ३८) से अभिन्न। धनिरूप देश में लकड़हारे का काम करते थे। प्रसिद्ध है कि एक बार लकड़ी काट कर इन्होंने उसे एक नाग से बाँध लिया था। अपने आप में इतने मस्त थे कि उन्हें पता ही नहीं चला कि नाग है या रस्सी उपयुक्त शिष्य देखकर इन्हें जालंधर नाथ के शिष्य कानिपा ने दीक्षा दी थी।

१२. चम्पक—चम्पारण्य देश (आधुनिक चंपारन) के निवासी थे। तनजुर में इनका एक ग्रंथ 'आत्म परिज्ञान दृष्टि उपदेश' नाम से उपलब्ध है।

१३. ढेन्टस - संभवतः ढेण्ढणपाद का नाम ही विकृत होकर ढेन्टस हो गया है। बौ० गा० दो० में इनका पद संगृहीत है।

१४. चुणकरनाथ—डा० बड़थ्वाल ने इन्हें गोरखनाथ के समय का सिद्ध माना है। इनके कुछ पद हिन्दी में मिले हैं। इन पदों की भाषा को देखकर डा० बड़थ्वाल ने इन्हें चरपटनाथ का पूर्ववर्ती समझा है (यो ग प्र वा ह, पृ० ७२)

१५. भादे—तिब्बती परंपरा में इन्हें श्रावस्ती का ब्राह्मण और कानिपा का शिष्य कहा गया है। जाति के चित्रकार थे। बौ० गा० दो० में इनका एक पद संग्रहीत है।

१६. कामरी—वज्रयानी सिद्ध कंबलांबरपाद (कमरिपा) से शायद भिन्न नहीं है। ये बौद्ध दर्शन के बड़े मान्य पंडित थे। प्रज्ञापारमिता दर्शन पर इनके चार ग्रंथ भोट-भाषा में प्राप्य हैं सुप्रसिद्ध सिद्ध वज्रघंटापाद के शिष्य और राजा इन्द्रभूति के गुरु थे। राहुल जी ने (गं गा पृ० २५२) इन्हें उड़ीसा देशवासी कहा है। हरप्रसाद शास्त्री इन्हें बंगला कवि समझते हैं। (पृ० ३७) वस्तुतः ये मगध में उत्पन्न ब्राह्मण थे और दीर्घकाल तक उड्डियान में रहे थे। वज्रयान के ये प्रसिद्ध आचार्य और युगनद्ध हेरुक के उपासक थे।

१७. धर्मपापतंग—जान पड़ता है कि धर्मपा और पतंग दो नाम हैं जो गलती से एक साथ पढ़ दिये गए हैं। इन्हीं का दूसरा नाम गुण्डरीपाद है। जाति के लुहार थे। इनके पद बौ० गा० दो० में प्राप्य हैं।

१८. भद्रपा—तिब्बती परम्परा के अनुसार मणिभद्र देश के ब्राह्मण थे। राहुल जी का अनुमान है कि मणिधर देश, बघेलखंड का मैहर है।

१९ सबर — इस नाम के दो सिद्ध हो गए हैं। एक राजा धर्मपाल (७६९-८०९-ई०) के कायस्थ लूहिपा के गुरु और दूसरे दसवीं शताब्दी के सिद्ध। दोनों को एक दूसरे से घुला मिला दिया गया है। सबर के लिखे अनेक ग्रंथ भोट अनुवाद में सुरक्षित हैं। (गं गा पृ० २४७) प० हरप्रसाद शास्त्री ने इनकी पुस्तक वज्रयोगिनी साधन के आधार पर अनुमान किया है कि ये उड़ीसा के राजा इन्द्रभूति और उनकी कन्या लक्ष्मींकरा के दल के आदमी थे। इन लोगों ने उड़ीसा में वज्रयान का बड़ा प्रचार किया

था (बौ० गा० दो० २९) । परन्तु प्रश्न यह है कि क्या सचमुच ही उड्डियान उड़ीसा ही है ? इस बात का विचार हम पहले ही कर आए हैं । वज्रयोगिनी के संबंध में इनकी कई पुस्तकें हैं । इनके दो गान बौ० गा० दो० में संगृहीत हैं । डा० भट्टाचार्य ने इन्हें नागार्जुन का शिष्य माना है । उनके मत से महायान मत में जो कलहस्थ्रा की साधना है उसके आदि प्रवर्तक यही हैं ।

२०. सान्ति (शान्ति)—वज्रयानी सिद्ध बारह से अभिन्न । इस नाम के अनेक सिद्ध हुए हैं (बौ० गा० दो० पृ० २९) परन्तु दसवीं शताब्दी में एक बहुत बड़े पंडित विक्रम शिला बिहार के द्वाररक्षक पंडित के रूप में नियुक्त थे । उनका नाम भी शान्तिपाद था । संभवतः नाथ सिद्ध यही होंगे । राहुल जी ने (गं गा० पृ० ७५८) लिखा है कि मगध देश में ब्राह्मणकुल में इनका जन्म हुआ था । ये इतने बड़े विद्वान् थे कि इन्हें लोग 'कलिकालसर्वज्ञ' कहा करते थे । बौद्धदर्शन पर इनके लिखे अनेक ग्रंथ थे जो भोट अनुवाद में ही शेष रह गए हैं । राहुल जी ने लिखा है कि वज्रयानी सिद्धों में इतना जबर्दस्त पंडित दूसरा नहीं हुआ ।

२१. कुमारी—संभवतः वज्रसिद्ध कुमरिपा से अभिन्न हैं ।

२२. सियारो—वज्रयानियों के एक सिद्ध का नाम शृगालीपाद है जो मगध के शूद्रकुल में उत्पन्न हुए थे और महाराज महीपाल (९७४-१०२६ ई०) के राज्य काल में वर्तमान थे । सियारी और ये अभिन्न हो भी सकते हैं ।

२३. कमल कंगारि—जान पड़ता है ये दो सिद्ध हैं, गलती से हरप्रसाद शास्त्री महाशय ने एक में लिख दिया है । वज्रयानी सिद्धों में एक कमलपा या कपालपा हो गए हैं जो दसवीं शताब्दी में वर्तमान थे और संभवतः बंगाल में शूद्रकुल में उत्पन्न हुए थे । छपे हुए वर्णरत्नाकर में कमल और कंगारी दो सिद्ध माने गए हैं ।

२४. चर्पटीनाथ—डा०मोहन सिंह ने पंजाब यूनिवर्सिटी लाइब्रेरी की ३७१ नं० की हस्तलिखित प्रति से चर्पटीनाथ के नाम पाई जाने वाली एक कविता अपनी पुस्तक के परिशिष्ट (पृ० ८०) में उद्धृत की है और इसका अंग्रेजी भाव भी दिया है । इसमें एक लक्ष्य करने योग्य बात यह है कि चर्पटीनाथ ने भेष के जोगी को बहुत महत्त्व नहीं दिया है, आत्मा का जोगी कहलाने को ही बहुमान दिया है[२] । इसके अन्त में बाह्य आचार

---

१. वर्णरत्नाकर की प्रस्तावना : पृ०१०-११

२. सुधु फटक मनु गिआनि रता । चरपट अखिवै विध मता ।
बाहिरि डलटि भवन नहि जाउ । काहे कारनि काननि का चीरा लाउ ।
बिभूति न लगाओ बिउतरि उतरिजाइ । खर जिउ धूकि लेटै मेरी बलाइ ।
सेली न बांधो लेवों ना म्रिगानी । अंडउँ ना लिया जो होइ पुरानी
पत्र न पूजो डंडा न उठावो । कुत्ते की निआई मांगने न जावो
बाडी करि कै मुगति न आओ । सिंघिआ देखि सिंगी न बजाओ ।
दुआरे दुआरे भूखा न पाओ । भेखि का जोगी न कहावो
आतमा का जोगी चरपटनाउ ।

धारण करने वाले अन्य संप्रदायों की व्यर्थता भी बताई गई है। जब काल की घटा सिर पर चढ़ आएगी तो श्वेत या नील पट या लंबी जटा, या तिलक या अनेक कुछ भी काम नहीं आएगा। इन बाह्याचारों के साथ कान फाड़ने वालों को भी एक ही सुर में सावधान किया गया है :

इक सेति पटा इक नीलि पटा, इक तिलक अनेक लंबि जटा।
इक फीए एक मोनी इक कानि फटा, जब आवैगी कालि घटा।

इससे मिलता जुलता पद हिंदू विश्वविद्यालय की एक प्रति से डा० मोहन सिंह ने ही संग्रह किया है।[1] उसमें कान फाड़ने वालों की बात नहीं है, पर उन सिद्धों को सावधान किया गया है जो हठ करके तप करते हैं।

इह संसार कंटकों की बाड़ी
निरख निरख पगु धरना।
चरपटु कहै सुनहु रे सिधो
हठि करि तपु नहिं करना॥

श्री संत संपूर्ण सिंह ने तरनतारन से प्राण संगली छपाई है उसमें चरपटीनाथ तथा गुरु नानक देव की बातचीत छपी है। उसमें भी यह पद है—

इक पीत पटा इक लंब जटा, इक सूत जनेऊ तिलक ठटा।
इक जंगम कहीऐ भसम घटा, जउ लहु नहीं चीनै उलटि घटा॥
तउ चरपट सगले स्वांग नटा।

—अध्याय ७६, पृ० ७९४

यहाँ प्रसंग से ऐसा जान पड़ता है कि चरपट नाथ रसायन सिद्धि की खोज में थे और निराश हो चुके थे। इस पद का भाव यह है कि वेश बनाने से क्या लाभ, सभी वेश तब तक स्वाँग मात्र हैं जब तक उनसे मृत्यु को जीतने में सहायता न मिले। यदि मृत्यु पर विजय ही नहीं मिली तो इन ठटों से क्या लाभ ? और मृत्यु पर विजय केवल रसायन से ही हो सकती है। सारी वार्ता रसायन के विषय में ही है।

इनके अतिरिक्त एक और अतिच्छिन्न हस्तलेख से भी कुछ अंश संग्रह करके डा० मोहन सिंह ने अपनी पुस्तक में छपाया है। इन सारे वाक्यों को पढ़ने से दो बातें बहुत स्पष्ट हैं : (१) चर्पटीनाथ बाह्य वेश के विरोधी थे और (२) कनफटा संप्रदाय में रहकर भी उसकी बाह्य प्रक्रियाओं को नहीं मानते थे। यह प्रवृत्ति नाथमार्ग में कब आई, यह विचारणीय है। वर्णरत्नाकर में चर्पटीनाथ का नाम आने से इतना तो स्पष्ट है कि चौदहवीं शताब्दी के पहले वे अवश्य प्रादुर्भूत हो चुके थे। प्राणसंगली के वार्तालाप से यह भी मालूम होता है कि वे रसायन-सिद्धि के अन्वेषक थे। इस पर से सिर्फ इतना ही अनुमान किया जा सकता है कि वे गोरखनाथ के थोड़े परवर्ती थे, संभवतः रसायनवादी बौद्ध सिद्धों के दल से आकर गोरखनाथ के प्रभाव में आए थे और अन्त तक बाह्य वेश के विरोधी बने रहे।

---

१ पृ० २१

चनसठ वें वज्रयानी सिद्ध का नाम भी चर्पटी है। तिब्बती परंपरा में उन्हें मीनपा का गुरु माना गया है, परन्तु नाथ-परंपरा में इन्हें गोरक्षनाथ का शिष्य माना जाता है। एक अनुश्रुति के अनुसार गोरक्षनाथ के आशीर्वाद से उत्पन्न हुए थे। मीन चेतन में इन्हें ही कर्पटीनाथ कहा गया है। इनके 'चतुर्भवाभिवासनक्रम' का तिब्बती अनुवाद प्राप्य है। रज्जबदास के 'सरबंगी ग्रंथ' में इन्हें चारणी के गर्भ से उत्पन्न बताया गया है। डा० बड़थ्वाल ने लिखा है कि चंबा रियासत की राजवंशावली में इनकी चर्चा आती है। वोगेल और ओमेन ने बताया है कि चंबा के राजप्रासाद के सामने वाले मंदिरों में चर्पट का मंदिर है जो सूचित करता है कि अनुश्रुतियों का राजा साहिल देव सचमुच ही चर्पट का शिष्य था (योगप्रवाह पृ० १८३ और आगे)। इनके कुछ हिंदी पद योगप्रवाह में संगृहीत हैं।